(2011) 3 एस. सी. आर. 197

विष्णु अग्रवाल

विरुद्ध

उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य

(2004 की आपराधिक अपील सं. 1323)

23 फरवरी, 2011

(मार्कंडेय काटजू और ज्ञान सुधा मिश्रा, न्यायाधिपतिगण)

न्याय प्रशासन में मामले का निर्णय वकील की अनुपस्थिति - एक पुनरीक्षण याचिका में, पुनरीक्षणकर्ता की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ - आदेश पारित किया गया। इस आदेश को अपास्त करने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया गया कि मामला उच्च न्यायालय की मुख्य वाद सूची मंे नहीं था, अतः पुनरीक्षणकर्ता का अभिभाषक मामले को देख नहीं सका और उपस्थित नहीं हो सका - उच्च न्यायालय ने आदेश वापस लिया - अपील में तय किया गया कि धारा 362 में बेषक यह अभिनिर्धारित किया गया कि कोई भी न्यायालय अपने निर्णय अथवा अन्तिम आदेश को हस्ताक्षर करने के बाद निस्तारण कर उसे न तो बदलेगा न उसका पुनरीक्षण करेगा। सिवाय इसके कि कोई लिपिकीय अथवा गणितीय गलती हुई हो। परन्तु

धारा 362 को एक कठोर और तकनीकी आधार पर इस प्रकार नहीं पढ़ा जा सकता कि न्याय का उद्देश्य समाप्त हो जाये। न्यायालय को अपना निर्णय सिर्फ कानून के अनुसरण में नहीं देना चाहिए, क्योंकि यदि निर्णय पूर्णरूपेण अयुक्तियुक्त है, अन्याय हो जायेगा। इससे भी अधिक पुनरीक्षणकर्ता द्वारा प्रस्तुत आवेदन आदेष को वापस लेने का था तथा आदेष का पुनरीक्षण करने के लिए नहीं था। पुनरीक्षण याचिका में न्यायालय मामले के गुणावगुण देखते हुए कि क्या अभिलेख को देखने से कोई गलती प्रतीत होती है जबकि आदेष वापस लेने की याचिका में न्यायालय को मामले के गुणावगुण देखने की आवष्यकता नहीं है, परंतु साधारणतः एक आदेश जिसे प्रभावित व्यक्ति को सुने बिना पारित किया गया है। उसे वापस लिया जाता है। अतः पारित किये गये आदेश में कोई कानूनी त्रुटि नहीं थी। तथा आदेश वापस लिये जाने के आदेश में कोई विधिक त्रुटि नहीं थी। दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 धारा 362 असित कुमार बनाम पश्चिम बंगाल राज्य व अन्य, 2009 (1) एस सी आर 469 पर भरोसा किया गया।

हरि सिंह मान विरुद्ध हरभजन सिंह बाजवा, एआईआर 2001 सुप्रीम कोर्ट 43 का संदर्भ दिया गया।

न्याय निर्णय जो उद्धृत किये गयेः

1. एआईआर 2001 सुप्रीम कोर्ट 43 उद्धृत किया गया।

2. 2009 (1) एस सी आर 469 भरोसा किया गया।

दाण्डिक अपीलीय क्षेत्राधिकार,

दाण्डिक अपील सं. 1323/2004

(उच्च न्यायालय इलाहाबाद के निर्णय व आदेश दिनांक 29.01.2004 के विरुद्ध दाण्डिक पुनरीक्षण याचिका 136/1998)

साथ में दाण्डिक अपील सं. 875/2006

मनोज स्वरूप ललिता कोहली, अभिषेक स्वरूप (मनोज स्वरूप एण्ड कम्पनी), सिद्धार्थ दवे, विभा दत्ता मखीजा, संदीप सिंह एवं मनोज स्वरूप एण्ड कम्पनी उपस्थित पक्षकारों की ओर से।

न्यायालय द्वारा निम्न आदेश प्रसारित किया गया -

आदेश

दाण्डिक अपील 1323/2004

1. उभयपक्षकारों के अभिभाषकगण को सुना गया।

2. यह अपील इलाहाबाद उच्च न्यायालय के आदेश व निर्णय दिनांक 29.01.2004 जो दाण्डिक पुनरीक्षण याचिका 136/1998 मंे पारित किया गया, के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है।

3. यह प्रतीत होता है कि उक्त दाण्डिक पुनरीक्षण याचिका उच्च न्यायालय में 02.09.2003 को सूचीबद्ध की गई थी। पुनरीक्षणकर्ता की

ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ। यद्यपि प्रत्यर्थीगण की ओर से अभिभाषक उपस्थित हुए। इन परिस्थितियों में निर्णय पारित हुआ।

4. इसके पश्चात एक आवेदन पुनरीक्षणकर्ता की ओर से प्रस्तुत किया गया कि आदेष दिनांक 02.09.2003 को वापस लिया जाये क्योंकि मामला कम्प्यूटर लिस्ट में तो दिखाया गया था परन्तु उच्च न्यायालय की मुख्य वाद सूची में नहीं था। इसलिए पुनरीक्षणकर्ता का अभिभाषक उसे देख नहीं सका और इसीलिए उपस्थित नहीं हुआ।

5. यह अकसर होता है कि एक मामला अभिभाषक अथवा उसके मुंशी द्वारा नहीं देखा जाता और इसीलिए अभिभाषक उपस्थित नहीं हो पाता। यह एक मानवीय भूल है तथा किसी के साथ भी ऐसा हो सकता है। अतः उच्च न्यायालय ने आदेश वापस लिया और निर्देश दिया कि मामले को ताजा सुनावाई के लिए लगाया जाये। उपरोक्त आदेश जिसके द्वारा आदेश दिनांक 02.09.2003 को वापस लिया गया को हमारे यहां इस अपील में चुनौती दी गई है।

6. अपीलार्थी के विद्वान अभिभाषक ने इस न्यायालय के हरि सिंह भान बनाम हरभजन सिंह बाजवा एआईआर 2001 सुप्रीम कोर्ट पेज 43 के पेरा 10 की ओर ध्यान दिलाया जो कहता है कि ‘‘धारा 362 दण्ड प्रक्रिया संहिता निर्धारित करता है कि कोई भी न्यायालय अपने निर्णय या आदेश को हस्ताक्षर कर निस्तारित करने के बाद उसका पुनरीक्षण नहीं करेगा और

न ही उसे बदलेगा सिवाय इसके की लिपिकीय या गणितीय भूल को दूर करे। यह धारा 1 सर्वस्वीकार्य विधि के सिद्धांत पर लागू है कि एक बार मामला अन्तिम रूप से न्यायालय द्वारा निस्तारित कर दिया जाये तो न्यायालय विशिष्ट कानूनी प्रावधान के अभाव में कुछ भी करने में अक्षम है। तथा इस बात का अधिकार नहीं रखती कि एक नई प्रार्थना उसी अनुतोष के लिए स्वीकार करे। जब तक कि पुराना आदेश किसी ऊँचे न्यायालय द्वारा जो उसे बदलने की क्षमता रखता है और विधि अनुकूल हो, बदल दिया जाये। वही न्यायालय एक बार आदेश हस्ताक्षर करने के बाद व मामले को निस्तारण करने के बाद निर्जीव हो जाता है। ऐसा आदेश तभी बदला जा सकता है जब उसमें कोई गणितीय या लिपिकीय त्रुटि हो। प्रत्यर्थी द्वारा तलब हाजी हुसैन के मामले (एआईआर 1958 सुप्रीम कोर्ट 376) (ऊपर वर्णित) उक्त मामले में भी यह तय किया गया था कि उच्च न्यायालयों में धारा 561ए (धारा 482 नए कोड में) दी गई अन्तर्निहित शक्तियों के तहत को विरले रूप से प्रयुक्त करनी चाहिए तथा साथ ही सावधानीपूर्वक भी प्रयुक्त की जानी चाहिए। जहां इस प्रकार का प्रयोग धारा में विषिष्ट तौर पर बताये अनुसार न्यायहित में हो। यह विवाद में नहीं है कि धारा 482 के तहत प्रस्तुत याचिका उच्च न्यायालय ने 07.01.1999 को निस्तारित की। नए कोड की धारा 362 लाॅ कमिशन की 41वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश के आधार पर बनाई गई है। संयुक्त चयन समिति का

गठन इसी उद्देश्य से किया गया था उसने भी पुनरीक्षण की रोक को न सिर्फ निर्णयों अपितु अन्तिम आदेशों पर भी लगाई है।

7. अपीलार्थी के विद्वान अभिभाषक मनोज स्वरूप का कथन है कि इस निर्णय के आधार पर उच्च न्यायलय ने आदेश दिनांक 02.09.2003 पारित करने में त्रुटि की है। हमें खेद है कि हम इससे सहमत नहीं हैं।

8. हमारी राय में धारा 362 को एक कठोर और तकनीकी आधार पर इस प्रकार नहीं लिया जा सकता कि उससे न्याय के उद्देश्य वृहस्पति के कहे अनुसार हार जाये।

"केवलम् शास्त्रम् आश्रित्य ना कर्तव्यो विनिर्णनयः युक्तिहीने विचारे तु धर्महानि प्रजायते"

अर्थात् न्यायालय को अपना निर्णय सिर्फ विधिक रूप से नहीं देना चाहिए, यदि निर्णय पूर्णरूप से अकारण है तो अन्याय होगा।

9. इसके अतिरिक्त हम इस राय के हैं कि प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत किया गया आवेदन आदेश दिनांक 02.09.2003 को वापस लेने का था, उसके पुनरीक्षण का नहीं था। असित कुमार बनाम प. बंगाल राज्य व अन्य 2009(1) एस सी आर 469 में इस न्यायालय ने आदेश वापस लेने व पुनरीक्षण में अन्तर बताया है जो इस प्रकार है -

एक पुनरीक्षण याचिका और आदेष वापस लेने की याचिका में फर्क है पुनरीक्षण याचिका में कोर्ट गुणावगुण पर यह देखती है कि क्या

अभिलेख पर कोई त्रुटि सीधे से दिखती है। जबकि वापस लेने की याचिका में न्यायालय मामले के गुणावगुण पर नहीं जाता बल्कि अपने द्वारा लिये निर्णय को वापस लेता है जो प्रभावित पक्षकार को सुने बिना पारित किया गया। हम इस आवेदन को अनुच्छेद 32 के तहत आदेश वापस लेने का आवेदन मानते हैं। क्योंकि आॅल बंगाल लाइसेंसी एसोसिएषन बनाम राघवेन्द्र सिंह व अन्य (2007) (1) एससीसी 374) इस न्याय निर्णय में कुछ लाइसेंस रद्द कर दिए गए थे, जबकि उन व्यक्तियों को नहीं सुना गया जिन्हें लाइसेंस दिए गए थे।

10. अतः हम उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में कोई त्रुटि नहीं मानते।

11. यह अपील खारिज की जाती है।

12. अपील खारिज की जाती है क्योंकि यह प्रभावहीन हो गयी है।

अपील खारिज की गई।

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक की सहायता से किया गया है ।

अस्वीकरण - इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।